ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-1* Issue-7* October- 2016
Anthology : The Research

ताल वाद्य की साधना (तबला के परिप्रेक्ष्य में)

राजकुमार त्रिपाठी
प्रवक्ता,
संगीत विभाग,
हे0न0ब0 गढ़वाल केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखण्ड

सारांश

संगीत ऐसी कला है जिसको स्वयं परमात्मा एवं प्रकृति के द्वारा मानव को उपहार स्वरूप प्रदान किया गया है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, प्रकृति एवं जीवन संगीत से ओतप्रोत है। स्वर और लय दो मुख्य तत्व संगीत रूपी रथ के दो पहिए हैं। लय के लिये ताल आवश्यक है और लय ताल के लिये ताल वाद्यों का बहुत महत्व है। भगवान शंकर के डमरू व गणेश जी के मृदंग से ताल वाद्यों का अविष्कार माना जाता है। वैदिक काल रामायण और महाभारत काल से मध्यकाल तक तमाम, ताल वाद्यों का वर्णन मिलता है। आज मृदंग, पखावज और तबला मुख्य रूप से हिन्दुस्तानी संगीत में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। जिसमें तबला वाद्य अपना विशिष्ट स्थान रखता है। ताल–वाद्य तबला उसकी वादन शैली, हाथ रखने का ढंग, उस पर अभ्यास करने का तरीका, वाद्य सामग्री शिक्षा और घरानेदार बन्दिशें एवं उसको आत्मसात करते हुए किस प्रकार साधना करने से एक उच्च कोटि का तबलावादक बना जा सकता है। इन तमाम तथ्यों को विस्तार से लिखकर युवापीढ़ी को तबलावाद्य एवं उसकी साधना के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण मार्गदर्शन करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द : ताल वाद्य, तबला, मृदंग, घराना, बन्दिशें, वादनशैली, तबलावादक, लय–ताल, संगीत।

प्रस्तावना

ईश्वर की सृष्टि किसी अनायास कर्म अथवा कार्य श्रृंखला का परिणाम नहीं यह एक शाश्वत प्रक्रिया है। प्राकृतिक एवं दिव्य शक्तियों में कोई भिन्नता नहीं। दोनों अनादि हैं। अगर ईश्वर कहीं विद्यमान है तो वह सर्वत्र है। वह एक सतत् सृजनात्मक गतिविधि है, जो हम, हमारे द्वारा तथा हमसे परे क्रियाशील है। यह विश्वात्मा ब्रहमाण्ड प्रक्रिया के द्वारा किस प्रकार कार्य करती है, यह हम नहीं जानते। दोनों का सम्बन्ध एक दुर्बोध रहस्य है। यदि हम ब्रहमाण्ड प्रक्रिया का किसी विशाल एवं गहन आकार का उद्घाटन मान लें तो विश्व की विफलताओं को समझना कठिन हो जायेगा। विश्व की किसी यथार्थ नवीनता में इस विचार को कोई स्थान नहीं है। इसलिये यह स्पष्ट है कि जो प्राकृतिक है वहीं ईश्वर है। संगीत प्रकृति का एक विशेष रूप है। समस्त ब्रहमाण्ड संगीतमय है। समुद्र, नदियां, झरने, पेड़, पौधे, पवन, मेघ आदि–आदि अनेकानेक रूप से संगीत उत्पन्न करते हैं। इसी स्वरूप को देव तथा मानवीय बुद्धि ने धीरे–धीरे विविध भांति के यंत्रों, स्वरों तथा कविनासी द्वारा परिवद्ध करके साकार रूप दिया, जिसे संगीत कते हैं।

संगीत में गायन, वादन एवं नृत्य सम्मिलित है। ताल तीनों का हृदय रूप है। अर्थात् ताल संगीत का प्राण है। सभी कलाओं की सर्वश्रेष्ठ संगीत कला के हृदय रूपी ठोल की व्याख्या अनेकानेक लेखकों ने अपनी–अपनी पुस्तकों में की है, तथा ब्रह्माजी द्वारा रची गई सृष्टि की रचना के साथ ताल के प्राण लय की उत्पत्ति एक शाश्वत प्रक्रिया है। इसलिये इस गहन विज्ञान के तथ्य की गहराई तक पहुंचने पर स्पष्ट हो जाता है कि समस्त ब्रहमाण्ड एक गति, चाल या लय पर आधारित है। सूर्य, चन्द्रमा और पृथ्वी आदि सब नियमित गति के अनुसार चले हैं अर्थात् लय को निकाल देने पर प्रलय अवश्यमेव है। इसलिये संगीत के आदि प्रंथकार ने भी अपने स्वराध्याय में कहा है– ''श्रुति माता लयः पिता'' तानसेन जैसे महान संगीतज्ञ ने भी लय–ताल बिना संगीत को निर्जीव कहा है इसलिये यह कहना उचित है कि सृष्टि में संगीत में ताल का सर्वोच्च स्थान है तथा इसकी उत्पत्ति प्रथम है। गायन, वादन एवं नृत्य इन तीनों की विशेषता ताल है जो लय की सीमा को निर्धारित करती है। जैसे– गीतं वाद्यम् तथा नृत्यम्, यतस्ताले प्रतिष्ठितम्''।

उद्देश्य

लय–ताल से सम्बन्धित ताल–वाद्य तबला उसका अविष्कार, क्रमिक विकास वैदिक काल से अभी तक उसका महत्व। आज के युग में ताल वाद्यों का स्थान तबला का महत्व, उसकी शिक्षा, वादन शैली, वादन सामग्री और अभ्यास संगीत एवं ताल वाद्य करने का ढंग तथा अन्य सम्बन्धित जानकारी देकर युवापीढ़ी शास्त्रीय संगीत एवं ताल वाद्य तबला का महत्व समझकर स्वयं अभ्यास करके किस प्रकार उच्च कोटि का कलाकार बन सकती है। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध पत्र लिखा गया है।

तबले के घराने

आजकल तबला प्रेमियों मे विशेष रूप से कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं जो घराना शब्द पर बहुत बल देते हैं। हालांकि किस घराने के तबला वादन में अमुक घराने से क्या पृथकता एवं विशेषता है इसकी उन्हें नाम मात्र भी जानकारी नहीं होती। किन्तु 'अहाहा!' 'क्या कहने!!' 'जवाब नहीं!!!' की उस समय झड़ी लगा देत हैं जब उनके मन का घराना बताकर कोई तबला वादन करता है। चाहे उस तबला वादक की उंगलियां तबले पर बेढंगी ही क्यों न पड़ती हों। पाठ्यक्रम में भी इस सम्बन्ध में पूछताछ करने की बातें रखी गई है। जिसके पीछे विद्यार्थियों को माथा पच्ची करनी पड़ती है। कहीं–कहीं तो ऐसे विद्यार्थी मिल जाते हैं जो तबला की जानकारी में सचमुच कमाल कर देते हैं। जैसे– अमुक घराने की चांट ऐसी है, अमुक घराने में बायें का काम अच्छा है, अमुक घराने का तबला बहुत कड़ा तो अमुक घराने का इतना मुलायम बजता है कि उंगलियां नाचती हुई स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है किन्तु ध्वनि नहीं सुनाई पड़ती। अर्थात् ऐसी बहुत सी बातें सुनाया करते हैं, और यदि किसी ने तबला लाकर आगे रख दिया तो इस प्रकार बजाते हैं जैसे अपनी घुटी हुई खोपड़ी पर हाथ फेर रहे हों।

पाठकों को यह बात सदा ध्यान में रखना चाहिए कि विद्या बपौती नहीं मानी जाती है। हां जेवर, कपड़ा, घर, बाग आदि चल तथा अचल सम्पत्ति पर पुत्र का केवल इसलिये अधिकार हो जाता है कि वह अमुक व्यक्ति का पुत्र है परन्तु जब तक वह पुत्र शिष्यत्व ग्रहण नहीं करेगा, तब तक अपने पिता की विद्या का अधिकारी नहीं बन सकता। उदाहरणार्थ– बहुत ऐसे उस्ताद हो गये हैं जिनके लड़के चाट तथा चाय की दुकान करके बाप का नाम लिया करते हैं और बहुत ऐसे भी लोग हैं जिनके साथ पुश्तों में कोई कलाकार नहीं हुआ परन्तु वे आज कला क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखे हुए है।

दिल्ली के स्व0 उस्ताद सिद्धार खां का यदि तबले का निर्माता मान लिया जाय तो सबसे पहले घरानेदार वही सिद्ध होते हैं। पश्चात् उसके पुत्र–पौत्रों तथा रिश्तेदारों और शिष्यों ने मेरठ में जाकर अजराडा, लखनऊ में लखनवी, फर्रूखाबाद में फर्रूखाबादी, वाराणसी में बनारसी आदि नामों से कायदों का निर्माण

करके अलग–अलग घरानों की नींव रखी। किसी ने ''धातिट धागेन धागेतिना धागेन धागे'' को दिल्ली का कायदा कहकर सम्बोधित किया तो दूसरे ने उसी को ''धात्रक धागेन धागेतिना ऽधागने धागे'' आदि लिखकर ''अजराडा'' बाज से प्रसिद्ध कर दिया। किसी ने ''धिन धातिर किटता धिना धातिरकिटता धिना धातिरकिटता धिना तूना'' लिखकर पृथक बाज निश्चित किया।

तात्पर्य यह है कि जिनकी उंगलियों में कुछ रस आया। बुद्धी में प्रतिभा का विकास हुआ उन्होंने अपने विद्यार्थियों में एक नई पीढ़ी की बात प्रकट कर दी जो कालान्तर में 'घराना' शब्द से सुशोभित हो गई। वैसे तो घरानों की पृथकता से तबले की व्यापकता में नई–नई रचनायें मिलती गई, जिससे तबला–वादक का कोष एक संचित कोष बन गया। प्रत्येक स्थानों के कायदों का अन्वेषण करने पर यही सिद्ध होता है कि शब्दों के हेर–फेर से कायदों का निर्माण होता रहा है। इनमें ताल, लय आदि का अन्तर न आ सका। आजकल के प्रत्येक तबला वादक प्रत्येक घरानों की जानकारी का आनन्द रंगमंच पर बैठकर अकेले ही श्रोताओं को देने का प्रयास करते हैं। यह अमुक उस्ताद का ''लाल किला'' है, तो यह खां साहब का ''लतीफा'' है, तो यह उनकी ''फुलझड़ी'' है आदि। किन्तु इन बात का रहस्य कलाकार महोदय से मिलकर ही समझा जा सकता है। श्रोताओं के समक्ष कुछ बोलना आवश्यक है चाहे वह युक्ति संगत हो अथवा असंगत हो। सबसे आश्चर्य तो उस समय होता है जब व्याख्या के विपरीत प्रदर्शन करते हैं। इतना ही नहीं, यह रोग अच्छे–अच्छे लोगों में भी देखा गया है। जबकि संगीत एक विशुद्ध कला है जिसका प्रत्येक अंश सत्यता से परिपूर्ण है उनके लिये असंगत तर्कों का उपयोग कला के लिये कलंक है।

प्रत्येक कलाकार के लिये ताल तथा लय से परिपूर्ण कला–प्रदर्शन ही अधिक महत्व का है। इतना ही नहीं, जिस घराने से वह अपना सम्बन्ध कायम करता है उसकी भी प्रतिष्ठा इन्हीं बातों में निहित है। फिर संगीत, जो कण–कण से प्रतिनिधित्व होता है उसके लिये तो कुछ कहना ही व्यर्थ है। लेखक का सत्य विचार है कि कला प्राप्ति में गुरू संगति की बड़ी आवश्यकता है तभी कोई सच्चा कलाकार बन सकता है, अन्यथा नहीं, और सच्चा कलाकार वही है जो दूसरों के गुणों को सच्चाई से ग्रहण करता है, नहीं तो मैंने जो सीखा वह ठीक है, जिस उस्तान ने सिखाया वे ठीक हैं और उस्ताद का जिस घराने से सम्बन्ध है वह ठीक है, अन्यथा सब मेरे पुश्तैनी खजाने के अशिक्षित चोर हैं। ऐसे लोग न किसी का आदर कर सकते हैं न किसी से आदर पा सकते हैं।

ताल वाद्य

भारतवर्ष में वाद्यों के वर्गीकरण में मुख्य चार स्थान हैं। तत् वाद्य, सुषिर, वाद्य, घन वाद्य एवं अवनद्ध वाद्य। कुछ लोग तत् एवं वितत् को अलग–अलग मानकर पांच भी कहते हैं किन्तु वितत् को तत् के अन्तर्गत ही माना है। तत् सुषिर एवं घन स्वर प्रधान हैं। अवनद्ध वाद्य ताल प्रधान है। आधुनिक युग में उत्तर भारत में मुख्यतः तबला, पखावज, ढोलक, नगाड़ा, ढ़ोल, खोल, खुर्दक, नाल, तासा, खंजरी, ढप, डपली, चंग, डमरू, हुड़क, उपंग मादिल, रूंज, कठताल, घटम् (घड़ा) आदि–आदि तथा पश्चात्य संगीत की देन से बेंगो, कांगो, फुट, ड्रम, ड्रम आदि–आदि ताल वाद्य प्रयोगात्मक है।

आधुनिक युग में समस्त ताल वाद्यों में तबले का सर्वोच्च स्थान है। इस युग को हम तबले का स्वर्ण युग कह सकते हैं जिसका सबसे अधिक शास्त्र उपलब्ध है तथा अधिक से अधिक कलाकार विद्यमान है जो ताल विज्ञान–तबला के महान पंडित एवं वादक है।

शिक्षा

तबला वाद्य को एक कठिन विषय मानते हैं, किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। इसको हमारे पूर्वजों ने ऐसा प्रतीत होते का भ्रम बना दिया है तथा इसके शास्त्र लेखन की ओर ध्यान न देकर समस्त बातों को छुपाकर अपने साथ ले जाने का एक मात्र कारण बना दिया है, जिससे यह कठिन प्रतीत होता है

इसलिये विद्यार्थियों को सरल आभास के लिये वाद्य का रखना, आसन से बैठना, हाथों का रखना, अभ्यास का तरीका, बोलों का निकास आदि–आदि बातों का लक्ष इस पुस्तक में निर्धारित किया गया है।

आसन

ताल वाद्यों की साधना के लिये मुख्य तीन आसन माने गये हैं। पद्मासन, वीरासन तथा सुखासन। तपस्वी, महात्मा, ऋषि मुनि और उच्च कोटि के कलाकार आदि सभी लोगों का लक्ष अपनी साधना में तल्लीन (एकाग्र चित्त) होकर उसे फलीभूत बनाना पद्मासन ही अग्रसर करता है। पद्मासन सतोगुणी तथा करूण रसमय है। आत्मसमर्पण की भावना जाग्रत करना, विनय तथा नम्र भाव उत्पन्न करना किसी कार्य के प्रारम्भ में तथा उसे सफल बनाने में अनिवार्य है। इसलिये पद्मासन से नित्य प्रति बैठकर अभ्यास करना चाहिए। यही हमारे पूर्वजों की परम्परा भी है।

वाद्य

तबला वाद्य को उत्तमविधि से रखना अति अनिवार्य है। दाहिना तबला पद्मासन के मध्य के समीप दाहिनी ओर ईडवी पर तीस डिग्री आगे की ओर झुकाकर रखना चाहिए। बायां मध्य से बांई ओर ईडवी पर सीधा तथा स्याही को आगे की ओर रखकर अर्थात् उल्टा बांयां रखकर बजाते हैं। किन्तु वयोवृद्ध उच्च कलाकारों के विचार से विद्यार्थियों के लिये यह अनुपयुक्त है। विद्यार्थियों को तीन–चार वर्ष तक निरंतर सीधी स्थिति में बायां रखकर अभ्यास करना चाहिए। इस प्रकार से अभ्यास में किनार एवं श्याहि के बीच कम मैदान मिलने से हाथ के सर्पाकारफन के आघात की कसौटी सही हो जाती है तथा उंगलियों को इधर–उधर दूर गिरने से बचा लेती है। उल्टे बांये से प्रारम्भ में, अभ्यास पर मैदान अधिक मिलने से उंगलियां इधर–उधर गिरकर हाथ को बिगाड़ सकती हैं इसलिये हाथ शुद्ध ढंग में होने के पश्चात् वादक चाहे जिस प्रकार रखकर बजा सकते हैं। दाहिना तबला अभ्यास के लिये प्रायः चौड़े मुंह का उत्तम होता है। यह नौ–दस उंगल (पंद्रह से अठारह सेंटीमीटर) का होना चाहिए। चौड़ी मुहर पर उंगलियों को अधिक क्षेत्रफल की दौड़ करनी पड़ती है। जिससे परिश्रम अधिक लगता है और हाथ जल्दी तैयार होता है। चौड़ी मुहर पर अभ्यास निरन्तर करते रहने के पश्चात् उससे कम चौड़े पर प्रदर्शन करने पर हाथ तेजी से तथा कम परिश्रम से, बोलों की अधिक शुद्ध एवं फलदार निकालने में सफल हो जाता है। चौड़ी मुहर की पुड़ी को नरम होने से बचाने के लिये, बनाने वाले को मोटी खाल तथा कड़ी पुड़ी के पहले ही निर्देश देकर उत्तम बनवाना चाहिए। आकार, काष्ठ एवं अन्य वस्तुओं के लिये सभी पुस्तकों में विवरण उपलब्ध है।

हथौटी

आसन एवं वाद्य को उचित ढंग से रखने के पश्चात् सबसे महत्वपूर्ण हाथों का रखना है सभी गुरूजन अपने शिक्षकों का ध्यान इस ओर आकर्षित करते हैं, फिर भी विद्यार्थियों को विशेषताः नित्यप्रति पूरा ध्यान रखकर अपने गुरू का अनुकरण करने में चूकना नहीं चाहते। पूरा ध्यान रखने पर भी अगर कुछ साधना शेष रहे या समझ में न आवे तो उसका स्पष्टीकरण करके सही अभ्यास करना चाहिए। सर्वप्रथम अपने गुरू एवं सरस्वती को नमस्कार करके प्रसन्न मुद्रा में शरीर को स्वाभाविक रूप में रखकर दोनों तबलों पर हाथ रखकर बैठें तथा इस बात का पूर्ण ध्यान रखें कि शरीर का कोई भी भाग तनाव एवं अप्राकृतिक रूप में तो नहीं है। तत्पश्चात् यह ध्यान दें कि दाहिना हाथ कलाई से लेकर कोहनी तक तबले की ऊंचाई से थोड़ा नीचा लटका सा, तथा कोहनी, पेट से तीन चार इंच दूर दिखाई देती रहे। बायें हाथ को गदेली से पीछे कलाई से चिपकाकर रखिये तथा हाथ एवं गदेली को ढ़ीला एवं कब्लेदार खिड़की की तरह घूमता हुआ रखिये। हाथ कलाई से कोहनी तक सीधा एवं पेट से कोहनी सात–आठ इंच लगभग दूर रखिये। दाहिने हाथ की उंगलियां लगभग बांई ओर चालीस–पैतालीस डिग्री का दृष्टिकोण रखती है। थिर–थिर में हाथ सीधा एवं नीचे

की ओर हो जाता है अंगूठा गजरे के पास प्रथम उंगली की ओर दृष्टिकोण रखता है। अंगूठे को न नीचे लटकने देना चाहिए न ऊपर पुड़ी पर आने देना चाहिए। केवल धिर–धिर से बोलों में पुड़ी पर सम्पूर्ण हाथ ऊपर आयेगा। पुड़ी पर उंगलियों के आघात में हथेली गजरे के पास सटी रहनी चाहिए। बांयें तबले पर हाथ कलाई के जोड़ से उंगलियों के अंत तक नाग के फल की तरह रहना चाहिए। अंगूठा, उंगलियों से दूर खुला न रहे। अंगूठा, ऊपर के जोड़ से उंगलियों की ओर मुड़कर उंगलियों से सटा रहे। इस प्रकार से दोनों हाथों को रखकर शुद्धतापूर्वक आघात करके वर्णों को निकालकर अभ्यास करें। जो विद्यार्थी उल्टे हाथ से तबला वादन करते हैं वे अपने नियम उसी प्रकार कर लें। वर्णों का निकास आगे पुस्तक में क्रियात्मक भाग में पढ़िये।

अभ्यास

प्रत्येक विद्यार्थी को नित्य–प्रति कम से कम दो घन्टा अभ्यास करना अति अनिवार्य है। कुशल वादक के लिये प्रतिदिन चार से छः घन्टे तथा उच्च–कोटि का कलाकार बनने के लिये आठ से दस घन्टे प्रतिदिन अभ्यास करना अनिवार्य है। अभ्यास के लिये सभी समय उचित है, किन्तु प्रायः सांयकाल, रात्रि के शान्त वातावरण में अधिक सफलता प्राप्त होती है। रात में चादर को दोहरा करके तबले की जोड़ी को ऊपर से ढ़ककर नीचे दबा देना चाहिए। जिससे पुड़ी पर सिलवट न रहे तब अभ्यास करिये। इससे अन्य लोगों को सुनाई भी नहीं पड़ेगा तथा परिश्रम अधिक लगेगा, हाथ तैयार होगा। अपने गुरू के सम्मुख तथा उनके साथ प्रतिदिन कुछ समय अभ्यास करना अति अनिवार्य है। अभ्यास काल में ब्रह्मचर्य का पालन, शुद्ध भोजन, दूध, घी आदि का सेवन और समय से आराम अति अनिवार्य है। अधिक अभ्यास के समय बैठे रहने से पेट का खराब होना संभव है, जिसके उपचार के लिये कुछ पैदल चलना आवश्यक है। व्यायाम सबसे अधिक लाभदायक है। अभ्यास में बोलों की पढंत का अभ्यास भी अति आवश्यक है। इससे लय पक्की होती है। सीने में ताकत आती है, तथा दम बढ़ता है पढंत से प्रत्येक बोल का चढ़ाव, उतराव, ठहराव, गमक आदि वस्तुओं का पूरा ज्ञान तथा लयबद्ध होने में सफलता प्राप्त होती है। पढंत से कला का विस्तार भी होता है। इसलिये अभ्यास के साथ पढंत का अभ्यास भी आवश्यक है।

बोल निकास

तबले में बोलों का निकास एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है। इसका कोई विशिष्टीकरण नहीं क्योंकि प्रत्येक वादक ने अपनी सुगमता के अनुसार अपना अलग–अलग तरीका अपनाया इसलिये इसके लिये केवल एक ग्रन्थ अलग से बना दिया जाय तो कुछ क्षतिपूर्ति हो सकती है। इसीलिये निकास का विषय एक कठिन समस्या है जिसकी पूर्ति एक उत्तम गुरू से शिक्षा लेने पर ही हो सकती है। फिर भी विद्यार्थियों को अपनी सफलता के लिये सजग होकर कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिए। जैसे– कुछ बोलों के बोलने और बजाने में अन्तर होता है कुछ बोलों का ढायं में अभ्यास कुछ और है द्रत में बजाने का तरीका और है। कुछ स्थान पर बोल बोले जाते हैं। किन्तु बजाने में लुप्त है। कुछ बोलों के पहले के बोल की ध्वनि से दूसरे का काम हो जाता है। दाहिने तबले के साथ बांये का मेल–जोल तथा बायें तबले के बोल दाहिने पर निकालना आदि–आदि बातों का पूर्ण ध्यान रखना आवश्यक है। अपने गुरू से इन सब बातों की जानकारी किये बिना अभ्यास नहीं करना चाहिए। क्रियात्मक भाग में बोलों के साथ उनका निकास भी समझाया है।

निष्कर्ष

प्रकृति से प्राप्त संगीत विशेष तौर पर लय–ताल वाद्यों की जानकारी वैदिककाल से लेकर अभी तक ताल वाद्यों का ज्ञान उनका क्रमिक विकास आज प्रमुख ताल वाद्य तबला उसकी शिक्षा, वादन शैली, वादन सामग्री अभ्यास और बन्दिशें लय ताल के अनेक पक्षों को समझकर किस प्रकार एक उच्चकोटि का कलाकार बना जा सकता है। ये ज्ञान देना ही शोध पत्र का उद्देश्य रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *ताल प्रकाश – भगवतशरण शर्मा*
2. *ताल परिचय – गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव*
3. *तबला पुराण – विजय शंकर मिश्रा*
4. *नाट्यशास्त्र – भरतमुनि*
5. *संगीत रत्नाकर– शारंगदेव*
6. *ताल वाद्य शास्त्र– मनोहर भालचन्द्र राव मराठे*